International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
Online ISSN: 2582-3493
Received: 05-10-2019; Accepted: 07-11-2019; Publised: 23-12-2019
Volume 1; Issue 2; 2019; Page No. 31-38

वैश्वीकरण के जन स्वास्थ्य पर बढ़ते दुष्प्रभावों पर विवेक पूर्ण विहंगम दृष्टि

विकाश प्रकाश
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बंगलौर, कर्नाटक, भारत

सरांश

स्वास्थ्य देखभाल की सुविधा प्रदान करने में भारत सरकार के मूल कर्तव्य का परित्याग करने से निजी क्षेत्र की स्वास्थ्य क्षेत्र में प्रवेश करने की क्षमता बहुत बढ़ गई है। स्वास्थ्य देखभाल और चिकित्सा देखभाल के बीच अंतर महत्वपूर्ण है और इस पर ध्यान देने की आवश्यकता है। स्वास्थ्य देखभाल में सिर्फ चिकित्सा देखभाल, अर्थात् बीमारियों का निदान और उपचार ही शामिल नहीं है बल्कि इसमें पोषण, पेयजल और स्वच्छता सुविधाएं, अच्छे आवास और बहुत कुछ शामिल हैं। परिभाषा के अनुसार निजी चिकित्सा देखभाल तभी बच सकती है जब वह लाभदायक हो (70)/ "मुक्त-बाजार" के सभी गुणों के बावजूद, जिन्हें बढ़ा चढ़ा कर बताया जाता है। ये संपूर्ण निजी क्षेत्र सरकार द्वारा प्राप्त प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष सब्सिडी के मेजबान के कारण संपन्न हो रहा है। यह विडंबना है कि एक सरकार, जो यह घोषणा करती है कि यह गरीबों के लिए "स्वास्थ्यवर्धक" स्वास्थ्य देखभाल को "आर्थिक सहायता" प्रदान करती है, निजी और कॉर्पोरेट चिकित्सा क्षेत्र को ऐसी सब्सिडी प्रदान करती है, जो विशेष रूप से अमीरों की जरूरतों को पूरा करती है(71)। इस प्रकार, बहुत ही मामूली लागत पर चिकित्सा शिक्षा प्रदान करने के बाद सरकार निजी चिकित्सा पेशेवरों और अस्पतालों को निजी अभ्यास और अस्पताल स्थापित करने के लिए रियायतें और सब्सिडी प्रदान करती है। यह देखा जा सकता है कि दिल्ली में अपोलो अस्पताल दिल्ली सरकार द्वारा उपलब्ध कराए गए सस्ती ज़मीन पर बनाया गया था! सरकार निजी दवा और चिकित्सा उपकरण उद्योग को प्रोत्साहन, कर अवकाश/छूट और सब्सिडी भी प्रदान करती है (72)।

स्वैच्छिक सहायता वाला क्षेत्र, जिसने स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करने के लिए भी कदम रखा है, केवल उन क्षेत्रों को ध्यान केंद्रित करने और प्राथमिकता देने के लिए मजबूर किया जाता है जहां अंतर्राष्ट्रीय सहायता उपलब्ध कराई जाती है - जैसे एड्स, जनसंख्या नियंत्रण, आदि (73)।

आज, पहली बार, हम चिकित्सा देखभाल क्षेत्र में पुरे संगठित कॉर्पोरेट क्षेत्र को प्रवेश करते हुए देख रहे है।जैसे-जैसे चिकित्सा का अभ्यास अधिक प्रौद्योगिकी गहन होता जा रहा है, चिकित्सा पेशेवर की भूमिका संकीर्ण होती जा रही है, और तकनीक की भूमिका बढ़ती जा रही है। इस कारण से पूरा कॉर्पोरेट घराना अब तकनीक पर ही निवेश कर रहा है ताकि मनमाने कीमत वसूल सके(74)।

सार्वजनिक स्वास्थ्य और नव-उदारवादी आर्थिक सिद्धांत के स्थापित आदर्शो के बीच स्पष्ट विरोधाभास है । सार्वजनिक स्वास्थ्य एक "सार्वजनिक लोक कल्याण " का विषय है, अर्थात् इसके लाभों को व्यक्तिगत रूप से आनंद या गणना करके नहीं किया जा सकता है, लेकिन उन लाभों के संदर्भ में देखा जाना चाहिए जो जनता द्वारा आनंदित हैं। इस प्रकार सार्वजनिक स्वास्थ्य परिणाम साझा मूल्य पर निर्धारित किये जाते है। और उनका संचय बेहतर रहने की स्थिति में ले जाता है।इन लोक कल्याण के विषयो के संग्रह से जीवन स्तर में सुधार आता है। मौजूदा आर्थिक नीतियां स्वास्थ्य को एक निजी कल्याण की वस्तु समझती है जो बाजार के माध्यम से पहुँचा जाता है। जबकि किसी भी सामाजिक कल्याणकारी निवेश में कटौती, सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं के क्रमिक विघटन के लिए जिम्मेवार है। सार्वजनिक संस्थानों में सेवा शुल्क लगाने से, गरीबों के लिए स्वास्थ्य सेवा पहुंच से बाहर हो जाती है।

स्वास्थ्य सेवा की जिम्मेदारी निजी क्षेत्र को सौंपना और सार्वजनिक स्वास्थ्य की प्रासंगिकत को कम करना है।दूसरी ओर निजी क्षेत्र केवल उपचारात्मक देखभाल पर ध्यान केंद्रित करता है। उदाहरण के लिए, भारत को स्वास्थ्य में अपने सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यय को कम करने और अंतरराष्ट्रीय बैंकों द्वारा भारतीय उपयोगकर्ताओं से स्वास्थ्य सेवाओं की लागत वसूलने के लिए मजबूर किया गया।

अतः इससे एक बात तो सिद्ध होती है कि स्वास्थ्य के क्षेत्र में बाजार और उसको प्रोत्साहित करने वाली नव-उदारवादी नीतियां जिसकी शुरुआत वैश्वीकरण से हुई और आज चरम पर है आम जनता के लिए काम नही करती है। ओर इनसब नीतियों का निर्धारण राजनीति करती है इसलिए इसके पीछे की राजनीति को समझना अतिमहत्वपूर्ण हो जाता है। इसलिए जरूरी है कि हम अपनी राजनीति खुद चुने अन्यथा यह राजनीति हमे चुन लेगी और जिस दिन इसने हमे चुन लिया फिर हमें जिंदगी भर उसी के साथ रहना पड़ेगा और फिर हमारे पास न तो शिकायत के लिए ओर न ही सुनवाई के लिए भी कोई स्थान बचेगा।

मूल शब्द: स्वास्थ्य, सुविधा, गरीबों, विहंगम, दुष्प्रभावों

प्रस्तावना

आज के इस नव-उदारवाद जिसकी शुरुआत वैश्वीकरण से हुई और आज अत्यन्तता के शिखर पर पहुँच चुकी है,के दौर में हमने एक ऐसी बाजार आधारित व्यवस्था का निर्माण किया है। जिसके अनुसार हर चीज बिकाऊ है चाहे वह लोक कल्याण के लिए बनाई गई सार्वजनिक नीति ही क्यों न हो (1)। यह एक ऐसी व्यवस्था है जिसमे हर चीज बिकने के लिए है और खरीदने के लिए बस पैसा होना चाहिए। इस व्यवस्था की विचारधारा है यह है कि सरकार को बाजार व्यवस्था बनाने में मदद

करनी चाहिए न कि रास्ते के रोड़े बनाना चाहिए वैसे सारी सरकार बुरी है बस बाजार ही सही है और सरकार को तठस्थ रहना चाहिए [2]। अर्थात एडम स्मिथ के अदृश्य हाथ समस्त मानव सभ्यता के समस्याओं का हल निकालने में सक्षम है। भारत मे इसकी शुरुआत Manmohanomics से 1991 में हुई जब भारत मे राजकोषीय घाटा इतना बढ़ गया था कि सरकार के पास मुश्किल से एक सप्ताह तक देश चलाने के लिए पैसा बचा था। और IMF ने कुछ शर्तो पर कर्ज देने के लिए राजी हुआ [3]। यही शर्त वैश्वीकरण के तरफ पहला कदम था। लेकिन उसके परिणाम क्या हुए, विशेष कर लोक कल्याण के क्षेत्र में इसकी ही चर्चा यहाँ की जा रही है।क्योंकि "तीसरी दुनिया के लोग "विकास" के दुष्प्रभाव से पीड़ित हैं जो अविकसितता की समस्याओं पर आधारित है।"[4]

इस वैश्वीकरण को विश्व भर में अपनाने के समय एक सपना देखा गया था । वह सपना था कि जब यह व्ययस्था आएगी तो सभी को रोजगार मिलेगा, औद्योगीकरण ओर पूर्ण प्रतियोगिता के कारण वस्तुओ के कीमत में गिरावट आएगी, गरीब खुशहाल हो जाएंगे, गरीबी मिट जाएगी, असमानता का भी नामोनिशान मिट जाएगा [5]। परंतु हुआ सब इसके उलट, बजाय ये सब करने के इसने इसने मजदूरों का वस्तुकरण कर दिया, लोक संवाद वाले विषयो के मायने ही बदल दिए, जन कल्याण वाले विषय भी अब बाजार भरोसे बैठे है जिसका उद्देश्य ही सब से लाभ कामना है और ये विषय तो इनके लाभ को कई गुना और बढ़ा देते है, जनता के सारे अधिकार छीन कर बाजार को देकर जनता को विकलांग बना दिया, समाज का एक वर्ग जो पहले से ही आमिर था वो और अमीर होते चले गया जिससे आर्थिक असमानता चरम पर पहुच गयी है और यही आर्थिक असमानता हमे सामाजिक और राजनीतिक बहिष्करण के तरफ ले जाती है [6]। समानता की बात करने वाले समत्ता के विषय पर तो बात करना ही भूल गए क्योकि वैश्वीकरण ने बहुराष्ट्रीय कंपनियों को इतना अधिकार और शक्ति दे दी कि जो बोलने वाले थे या तो उन्हें कमजोर कर असहाय कर दिया गया कि वो बस चुप -चाप तमाशा देखते रहे या फिर पैसे से उनके मुंह को भर दिया गया [7]। एक वैश्विक साजिस के तहत सरकारे इतनी निर्बल कर दी गयी और उन्हें अहसास दिलाया गया कि वो आज बाजार और बहुराष्ट्रीय कंपनियों के बिना कुछ नही कर सकती। और इसलिए सरकार की निर्भरता को और बढ़ाया गया, और धमकी भी दी गयी कि अगर हमारे खिलाफ कुछ भी किया तो हम छोड़ कर चले जायेंगे फिर देखते है कि आप क्या करते हो [8]।

पूरी बाजार व्यवस्था Efficiency के संकल्पना पर आधारित है जो कि जन कल्याण के विषयों को जैसे स्वास्थ्य और शिक्षा पर लागू नही होती है क्योंकि ये विषय बाजार विफलता के अधीन आते है [9]। मेरा विषय यहाँ वैश्वीकरण के स्वास्थ्य के क्षेत्र में पर दुष्प्रभाव की चर्चा करना है, ये दुष्प्रभाव निम्नलिखित है।

(1) समाज मे बढ़ रही भयंकर आर्थिक असमानता और स्वास्थ्य का आम जन के पहुँच से बाहर जाना

हम आज जिस समाज मे रह रहे है उसमें oxfam के 'The Widening Gap : India Inequality Report 2018' के अनुसार भारत मे सिर्फ 1% लोगो के पास पूरे भारत की संपत्ति का 73 % है। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि असमानता की स्थिति कैसी है । धन बस कुछ लोगो के हाथों में केंद्रित हो चुका है [10]। और खास बात तो यह है कि इस वैश्वीकरण के युग मे अच्छी स्वास्थ्य सेवा का लाभ वही ले सकता है जिसके पास उसे लेने के लिए पैसा हो वर्ना वो उनके पहुँच से बाहर होगा। यहाँ यह बताना जरूरी है कि जन स्वास्थ्य सिर्फ हॉस्पिटल में आई लागत या इसके अंदर की व्यवस्था पर ही निर्भर नही करता बल्कि इसके अंदर लोगो के लिए जल, पोषण, खान-पान, रहन-सहन, आय, तकनीक उपयोग, खरीद शक्ति, और खनिज संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग आदि विभिन्न अन्य चीजो पर भी निर्भर करता है [11]। अगर इन सारे विभागों को साथ मे मिला दिया जाय तो पता चलेगा कि देश के एक बहुत बड़ी जनसंख्या इन सारी सुविधाओं से वंचित है।

सामाजिक और आर्थिक असमानताएँ पोषण और स्वास्थ्य में तब्दील हो जाती हैं। इस वैश्वीकरण ने दुनिया के सबसे गरीब 46 देशों में आधे लोग के लिए आधुनिक स्वास्थ्य को आम लोगो के पहुच के बाहर कर दिया है ।तीन अरब लोग - यानि दुनिया की आधी आबादी - स्वच्छता सुविधाओं के पहुंच के बाहर है; एक अरब के पास सुरक्षित पेयजल तक नहीं पहुँचा है [12]। दुनिया की 100 सबसे बड़ी अर्थव्यवस्थाओं में से, 51 बहु-राष्ट्रीय निगम हैं और केवल 49 देश हैं।तीन घंटे की विश्वव्यापी सैन्य खर्च डब्ल्यूएचओ (WHO) के वार्षिक बजट के बराबर है। तीन सप्ताह के विश्व हथियार खर्च प्राथमिक स्वास्थ्य प्रदान कर सकते हैं,साथ में गरीब देशों के सभी व्यक्तियों के लिए पानी और स्वच्छता सहित देखभाल भी [13]। जो लोग सामान खरीदना पसंद करते हैं, उनका तर्क है कि वैश्वीकरण लोगों को बाजार में जगह प्रदान करता है। ये लोग वैश्वीकरण को न केवल अपरिहार्य के रूप में देखते हैं, बल्कि अनिवार्यता के रूप में भी देखते हैं। आमतौर पर, निश्चित रूप से, ये वही लोग हैं जिन्हें वैश्वीकरण की प्रक्रिया से लाभ मिला है। ऐसे अन्य लोग हैं जो वैश्वीकरण को "पश्चिमीकरण" के रूप में देखते हैं। वे "पश्चिम" के विचारों से दूषित "भारतीय" मूल्यों और संस्कृति के नुकसान पर आपत्ति जताते हैं [14]। ये एक अलग बहस का विषय है। कोई भी इस बात से इंकार नहीं करेगा कि वैश्वीकरण का वास्तव में स्वागत किया जाना चाहिए अगर इसका मकसद है विचारों और लोगों का अधिक से अधिक आदान-प्रदान हो। लेकिन विडंबना तो देखिए, इसने एक ऐसी व्यवस्था का निर्माण कर दिया है जहाँ वस्तुओ के आयात-निर्यात को तो प्रोत्साहित किया जाता है लेकिन आम लोगो का नही और आज की रेफ्यूजी संकट इसी का रूप है। लेकिन सवाल यह है कि क्या वाकई रेफ्यूजी एक संकट है। भारत मे रोहिंग्या, यूरोप में सीरियन और अरब, अमेरिका में मैक्सिको के लोगो का आवागमन रोकने के लिए दीवार बनाना, क्या यही वह वैश्वीकरण है जिसके लिए विकासशील देशों का कमर तोड़ दिया गया और फिर उनके निर्बाध आवागमन पर रोक भी लगा दिया गया [15]।

और ये आयात-निर्यात भी कैसा है ? यह वही है जहाँ विकसित देश कम लागत से माल तैयार करते है वो भी विकासशील देशों में क्योंकि वह उन्हें सस्ती कीमत पर कामगार मिल जाते है, सरकार भी निवेश से खुश होकर इन्हें बेतहाशा कर छूट देती है और कही-कही तो आर्थिक मदद भी पहुँचती है, उसी देश मे इन्हें कई बार जरूरी कच्चे -माल भी आसानी से मिल जाते है और फिर यही तैयार माल विकसित देशों से घूम कर बाजार के तलाश में विकासशील देशों तक पहुचते है और भी कई गुना कीमत ज्यादा होकर, फिर वही मजदूर लोग अपनी आय का सारा भाग इन्ही वस्तुओ के खरीद पर खत्म कर जाते है और गरीब के गरीब ही बने रहते है। इसकी पूर्ण विवेचना आगे आने वाले भागो में होगी कि ऐसी प्रक्रिया आज सफल कैसे हो रही है और इसमें WTO, IMF, World Bank का क्या योगदान है [16]।

(2) बढ़ते नगरीकरण एवं इसके नकारात्मक पर्यावरणीय परिणाम

औद्योगिक क्षेत्र में, नई नीतियों ने विकासशील देशों में सरकारों को अपने स्वयं के उद्योगों के लिए समर्थन वापस लेने के लिए मजबूर किया। सरकार सार्वजनिक क्षेत्र को चलाती है, जिसका उद्देश्य बुनियादी ढांचा तैयार करने और बिजली, सड़क, संचार, पानी, आदि जैसी सार्वजनिक सुविधाएं प्रदान करना है, इसे व्यवस्थित रूप से विघटित कर दिया गया । उनका निजीकरण किया गया, और बहुराष्ट्रीय निगमों को सौंप दिया

गया [17]। ये कंपनियां इसी कारण से आज कई गुना लाभ कमाने में सफल भी है। इसने खनिजो के अंधाधुंध प्रयोग को बढ़ाया ताकि औधोगिकरण को बल मिल सके लेकिन ये उपभोग जिस स्तर और पैमाने पर किया गया इसने आज के अन्य नए समस्याओं को भी खड़ा कर दिया है [18]। कई नई बीमारियों का आगमन हुआ है और कई पुरानी बीमारियाँ नया रूप लेकर ओर मजबूती से आगे खरी है [19]।

यह सर्वविदित सत्य है कि मानव की विभिन्न गतिविधियों के कारण भूमि, वायु, जल और उसमें निवास करने वाले जीवों के लिये खतरा उत्पन्न हो गया है। इस अवक्रमित वातावरण के कारण, बदले में मानव स्वास्थ्य और सामाजिक कल्याण के लिये गंभीर खतरा पैदा हो गया है [20]। विकासशील देशों जैसे भारत में भोजन, जल और हवा में रोगाणु होने के कारण उत्पन्न जैविक संदूषण स्वास्थ्य के लिये एक भारी समस्या बना हुआ है। विषाक्त रसायनों और हानिकारक विकिरणों ने पहले से ही गंभीर समस्याओं को स्वास्थ्य के लिये और अधिक कठिन बना दिया है। विकासशील योजनाओं के कारण पर्यावरण का प्रदूषित होना और उसके फलस्वरूप विभिन्न प्रकार की स्वास्थ्य समस्याएँ पैदा हो रही हैं [21] ।पर्यावरणीय प्रदूषण मानव जाति के स्वास्थ्य और कुशलता पर प्रतिकूल प्रभाव छोड़ता है।स्वच्छ पेयजल का अभाव, अस्वच्छ दशाएं और गाँवों शहरों, कस्बों का प्रदूषित वातावरण बीमारियों के फैलने और खराब स्वास्थ्य के लिये उत्तरदायी [22] है।अनेक जल-जनित रोग जैसे हैजा, संक्रामक हैपिटाइटिस, पेचिश और डाइरिया, बिल्हारजिया और मलेरिया अलग-अलग ढंग से फैलते हैं। अनुचित ढंग से उपचारित या अनुपचारित सीवेज को नदियों में मिलाने से गम्भीर रूप से जल-प्रदूषित हो जाता है और स्वास्थ्य पर उसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

2015 में 2.51 मिलियन मौतें, प्रदूषण के कारण हुई हैं (Lancet commission Report on Pollution) [23]। कृषि क्षेत्र के प्रमुख वायु प्रदूषक हैं अमोनिया, मिथेन और कीटनाशक, कुटीर उद्योग और बड़े औद्योगिक क्षेत्र के मुख्य वायु प्रदूषक हैं धुआँ, कार्बन डॉइऑक्साइड और सल्फर के ऑक्साइड।खदानों में विशेषकर कोयले की खानों में श्रमिकों को लम्बे समय तक कोयले की धूल में रहना पड़ता है जिसके फलस्वरूप काला फेफड़ा रोग हो जाता है। इस रोग का कोई उपचार भी नहीं है [24]। केवल सावधानी ही रखनी होती है कि गम्भीर रूप लेने से पहले ही कोयले की धूल के वातावरण से निकल लिया जाय।खदानों में, पत्थर की छोटी खानों में और अनेक अन्य उद्योगों में श्रमिकों को लम्बे समय तक तेज ध्वनि का सामना करना पड़ता है। 85/90 से उच्च स्तर के शोर में लम्बे समय तक रहने से चिड़चिड़ापन, अनिद्रा, उच्च रक्तचाप और स्थाई या अस्थाई बहरेपन की समस्या हो सकती है [25]। पर्यावरण में बहुत से हैवी मैटल्स जैसे लैड, पारद, आर्सेनिक और केडमियम भारी मात्र में उपस्थित रहते हैं जिनसे स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। ये कैंसर का कारण भी होते हैं और मृत्यु का भी कारण हो सकते हैं [26] ।

"The state of global climate in 2018" के अनुसार कुपोषण के रोकथाम में सबसे बड़ी बाधा मौसमी घटनाएं है जैसे बाढ़-सुखाड़ के कारणों से आज भुखमरी अपने स्तर से काफी बढ़ गयी है [27]/और हक़ीक़त यह है कि Global nutrition report 2018 के अनुसार दुनिया की 1/3 कुपोषित बच्चों की संख्या भारत मे है [28]।

(3) नई आर्थिक शक्तियां एवं उनके नीतियों का जन स्वास्थ्य पर प्रभाव

दुनिया भर में पैसा कम और कुछ हाथों में केंद्रित हो गई। इस प्रकार गरीब देशों की अर्थव्यवस्था उन लोगों के हाथों में बंदी है जिनके पास भारी मात्रा में धन है- ये अमीर देशों में स्थित बड़े बहुराष्ट्रीय बैंक हैं या विदेशी संस्थागत निवेशक (FIIs),यदि किसी दिन वे किसी अन्य देश में अपना पैसा स्थानांतरित करने का निर्णय लेते हैं, तो वे इन विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को बंद करने की क्षमता रखते है [29]।इन नीतियों और प्रक्रियाओं ने मिलकर तीसरी दुनिया के देशों की ऋणग्रस्तता में वृद्धि की, जिन्हें वे कम करने के वादे के साथ आये थे। आज भारत अकेले अपने 2019 के अंतरिम बजट का सबसे बड़ा हिस्सा जो कि 6, 65, 061 करोड़ रुपया सिर्फ लोन के ब्याज देने में लगता है जबकि स्वास्थ्य पर इसका कुल बजट केवल 63,538 करोड़ रुपया ही है [30]।

ये सब मुमकिन हुआ 1987 विश्व बैंक के एक दस्तावेज़ "Financing Health Services in Developing countries" के कारण ।जिसके मुख्य सुझाव निम्नलिखित थे [31]।

1) रोगियों द्वारा भुगतान की गई राशि बढ़ाएँ।
2) निजी स्वास्थ्य बीमा तंत्र विकसित करें (इसके लिए राज्य समर्थित स्वास्थ्य सेवाओं के निरस्त्रीकरण की आवश्यकता है जैसे कि मुफ्त या कम लागत वाली स्वास्थ्य देखभाल जिसमे निजी बीमा में बहुत कम रुचि है)।
3) निजी क्षेत्र की भागीदारी का विस्तार करें।
4) सरकारी स्वास्थ्य देखभाल सेवाओं को विकेंद्रीकृत करें (वास्तविक विकेंद्रीकरण नहीं बल्कि राज्य की जिम्मेदारी "रोलिंग बैक (Rolling Back)" और स्थानीय समुदायों पर खर्च के बोझ को बढ़ाना)।

इन सिफारिशों को आगे "ठीक-ठीक" विश्व बैंक की विश्व विकास रिपोर्ट, 1993 द्वारा "Investing In Health" शीर्षक से दोहराया गया।वैश्वीकरण के एक महत्वपूर्ण परिणाम को आमतौर पर "Feminisation of Poverty" के रूप में वर्णित किया गया है क्योंकि महिलाओं को बढ़ते दबावों के सामने विभिन्न तरीकों से परिवारों को एक साथ रखने का प्रयास करना पड़ता है जिससे उनमे उनमें से प्रमुख गरीबी और असुरक्षा बढ़ रही है [32]।

आज एक ही संस्थान है जो सम्पूर्ण वैश्वीकरण के पर्याय बन कर उभरा है। सभी देश और विश्व की सभी कंपनियों के नीति निर्माण का यही घर है। अब इस संस्थान के कार्यो और उसके जन स्वास्थ्य पर पड़े प्रभावो की चर्चा करते है। क्योंकि ये एक ऐसा संस्थान है जहाँ रह कर बहुराष्ट्रीय कंपनियां हर देश की सामाजिक सुरक्षा की नीति को प्रभावित करता है [33]।

WTO और बहुराष्ट्रीय कंपनियों का जन सवास्थ्य के विघटन मे योगदान

विश्व व्यापार संगठन के विभिन्न अंगों का स्वास्थ्य क्षेत्र पर प्रभाव पड़ता है। विश्व व्यापार संगठन के तहत कुछ महत्वपूर्ण समझौते**,** जिनका स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ता है ।वे निम्नलिखित है **:**

(1) The General Agreement on Trade in Services (GATS): अन्य सभी समझौतों के रूप में **GATS** में ऐसे प्रावधान शामिल हैं जो किसी भी राष्ट्रीय कानून को और अधिक निष्क्रिय **(Deregulate)** करने की अनुमति देते हैं जिन्हे मुक्त व्यापार के लिए प्रतिकूल माना जाता है।सिएटल में विश्व व्यापार संगठन की बैठक में**,** अमेरिका विशेष रूप से व्यवसायों जैसे स्वास्थ्य और शिक्षा के सेवाओं में मुक्त व्यापार चाहता था।बहुराष्ट्रीय निगमों ने नए व्यापारिक नियमों की पैरवी करना शुरू कर दिया हैं**,** जो सेवाओं में वैश्विक बाजार के अपने हिस्से का विस्तार करना चाहती है खासकर उन सामाजिक सेवाओं के क्षेत्रों में जहां सरकारें अपने बजट का काफी हिस्सा खर्च करती हैं **[34]**।

(2) व्यापार संबंधित बौद्धिक संपदा अधिकार (ट्रिप्स) - गरीब के लिए कोई दवाइयाँ नहीं (Trade Related Intellectual Property Rights (TRIPS))

TRIPS बड़ी जैव प्रौद्योगिकी, दवा, कंप्यूटर सॉफ्टवेयर और अन्य व्यवसायों के हितों की रक्षा करता है। यह नकदी की तंगी वाली सरकारों पर 'cost of policing' को बढ़ाता है।और पूरी तरह से उपयोगी प्रौद्योगिकी के हस्तांतरण को रोकता है।विकास के विभिन्न चरणों पर होने के बावजूद, विश्व के सभी देशों पर एक ही पेटेंट संरचना लागू करना अतार्किक है वो भी सिर्फ प्रोडक्ट पेटेंट /(Regime (शाषन) -Process patent law was enacted in India in 1970 patent act). TRIPS समझौते के कारण भारत जैसे देश को अपना मजबूत पेटेंट सुरक्षा शाषन को हटाना पड़ा। ये वो शाषन था जिसने घरेलु कंपनियों को वैसे दवाइयों को बनाने की अनुमति दे रखी थी जिसकी खोज उनके देश में नहीं हुई है। और इन दवाइयों को भारत जैसे देशो में वैश्विक मूल्य 1/2० या 1/2०० दाम पर बेचा जाता था ताकि गरीब आदमी भी अपना उपचार आसानी से करा सके [35]/

(3) कृषि पर समझौता - खाद्य सुरक्षा पर हमला (Agreement on Agriculture)

वैश्वीकरण के वर्तमान चरण में खाद्य सुरक्षा के गंभीर परिणाम हैं, जो अच्छे स्वास्थ्य का एक अभिन्न अंग है। वैश्वीकरण के आने के बाद बहुराष्ट्रीय कंपनिया जो कि मुख्यतः विकसित देशों की ही है, ने WTO और world Bank के माध्यम से विकसशील देशो पर जोर डलवाया की उन्हें विकसित देशों को निर्यात करने वाली फसलों को उपजाना चाहिए, बजाए सिर्फ घरेलू उपयोग में आने वाले भोज्य पदार्थों के इससे उनका मुनाफा काफी बढ़ेगा, जिसे नगदी फसल कहते है। चूंकि हमने WTO और WB के साथ मिलकर साझा मसौदे पर हस्ताक्षर किये है तो हमे यह बात माननी पड़ी। और आज यह स्थिति बन गयी है कि भारत एक खाद्यान्न अधिशेष देश तो बन गया ह परन्तु उसके लोगो के पास खाने को कुछ नही है और लोग भुखमरी ओर कुपोषण के शिकार है [36]। आज किसानों की आत्महत्या जगजाहिर है लेकिन सरकार असफल है इसे रोकने में । किसानों के अपने फसल के दाम तक नही मिल पा रहा है। तो आखिर यह जा कहा रहा है ? जी हां, यह जा रहा है बहुराष्ट्रीय कंपनियों के पास जो इसे कालाबाज़ारी के लिए गोदान में छुपा कर रखती है और पूर्ति को कम कर मुनाफा को बढ़ाती है। इसे ही पी. साईनाथ ने "Corporate Hijack Of Agriculture Sector" कहते है। 'अरब स्प्रिंग' की वजह भी यही बनी थी क्योंकि वहाँ पहले भी food riots हो चुके थे लोग हताश थे और उनके पास खाने को भी कुछ नही था और उसी समय पर खाद्य कंपनियो के मुनाफा कमाने में कोई कमी नही थी [37]।

(4) बदलते बहु-केंद्रीय भू-राजनीति

आज हर देश अपना एक नया गुट बनाने में लगा हुआ है, जैसे EU, ASEAN, SAARC, G-7, BRICS उनमे से कुछ प्रमुख है। EU और अमेरिका की अपनी एक अलग राजनीति है जो विश्व पटल पर धाक जमाने की है । तो इस दौड़ में चीन और रूस भी कम नही है। इटली के BRI में चीन के साथ आ जाने से अमेरिका उससे डर गया है। फिर वेनेजुएला में रुसी सेना का आगमन भी एक प्रकार से अमेरिका को चुनौती से कम नही है [38]। यहां ये बाते इसलिए लायी गयी है क्योंकि शक्ति केन्द्र जब -जब बदलता है WHO और सामाजिक सुरक्षा के नियम भी वैसे ही बदलते है [39]। आज हम देखते है कि बहुत सारे देश जो एक समय मे सामाजिक सुरक्षा के विषयों पर विश्व को रास्ता दिखलाने वाले थे और इन्ही विषयो पर बात करने के कारण उन्हें जीत मिली थी, आज अपने वादा से मुकर गए है [40]। विचारधारा तो अब रह ही नही गयी है और इस मामले में रूस और चीन तो बिल्कुल ही पीछे है जिन्हें सबसे ज्यादा लोक स्वास्थ्य के विषय पर काम करना चाहिए था वो इसमे सबसे ज्यादा पिछड़े हुए है। क्योकि अधिक से अधिक पूंजी जमा करने के होड़ ने सबके विचारधारा को भी दूषित कर दिया है [41]।

आये दिन देखने पर पता चलता है कि शक्ति का केंद्रीकरण और वर्चस्व की लड़ाई में अब विकासशील देश भी पीछे नही रह गए है। चीन, भारत, ब्राज़ील, कोरिया भी अब दौड़ में है और सब अपने आस-पास के क्षेत्र पर आधिपत्य जमाना चाहते है [42]। इसीलिए अंतरास्ट्रीय संबंध के विषय ज्यादा महत्वपूर्ण हो चुके है। मेरा व्यक्तिगत मनना यह है कि शक्ति का विकेंद्रीकरण बहुत जरूरी है लेकिन शक्तियों का परस्पर तनाव और टकराव या तो लोगो मे भय का माहौल पैदा करता है या विध्वंश लाता है। वर्तमान समय मे 'व्यापार युद्ध' और अफगानिस्तान, सीरिया, और अन्य संग्लन देशों में जो 5 लाख के करीब लोग मारे गए है इसी का नतीजा है। अमेरिका और रूसियो के इस वर्चस्व के लड़ाई ने न जाने कितनी मासूम जाने ली है [43]। और एक किसी शासक वर्ग को फायदा पहुचाने की कोशिश भी की गई है। असली नाराजगी वर्चस्व से नही है बल्कि वर्चस्व को व्यक्तिगत लाभ और युद्ध जैसी विभीषिका के लिए नीतियो के निर्माण या संबल प्रदान करने से है। इसीलिए आज के इस वैश्वीकरण को "Democartic Deficit " के रूप में देखा जाता है। जहाँ के कई विकासशील देशों के लिए ये एक "Bounced Check" के समान है। उसका कोई उपादान भी नही है क्योकि सामाजिक मूल्यों की गणना बहुत आसान नही है [44]। इसके अतिरिक्त सन् 1952 के बीच में अमेरिका में बनी मार्शल योजना के तहत यूरोपीय देशों को अपने बाजारों को विकसित करने हेतु 17 अरब डालर की अतिरिक्त अमेरिकी सहायता दी गयी। जिसके परिणाम स्वरूप यूरोप की प्रति व्यक्ति आय नाटकीय तरीके से बढ़ गयी। मार्शल योजना की यह सफलता थी, जिसके कारण यूरोपीय बाजार में अमरीका की वस्तुओं की मांग और अधिक बढ़ गयी। अमीर देशों द्वारा गरीब देशों को दी जाने वाली आर्थिक सहायता का वास्तविक रूप सन् 1952 में देखने को मिला [45]। विकसित देशों द्वारा दी जाने वाली आर्थिक सहायता गरीब देशों में बाजार पैदा करने के काम आती है, न कि उन देशों का विकास करने में। यूरोपीय अर्थशास्त्री रेमन्ड वर्नोन ने योजना पर टिप्पणी करते हुये कहा था । "अमेरिका के लिये मार्शल योजना एक ऐसा राजनीतिक हथियार है, जिससे वह अपने देश की कम्पनियों को यूरोप में चल रहे आर्थिक युद्ध में सम्पूर्ण विजय की ओर ले जा रहा है और दुनिया में अमेरिकी आर्थिक-आधिपत्य की जड़ों को मजबूत कर रहा है। इस मार्शल योजना के दूरगामी परिणाम होंगे। दुनिया के अन्य गरीब देश भी अमेरिकी मदद पाने के लिये एक दूसरे से होड़ करेंगे जिसकी वजह से उनका सही विकास अवरुद्ध होगा और वे एक ऐसे विकास के रास्ते पर धकेल दिये जायेंगे जहां से वापस लौटना उन गरीब देशों के लिये फिर असम्भव होगा।"[46]

(5) देशो का व्यापारियों द्वारा शाषित होना

"The Global Surveillance And Monitoring Systems Of Substandard And Falsified Medical Products" के अनुसार 2013 से 2017 के बीच, सब -सहारा अफ्रीका में दुनिया की आधी नकली और कम गुणवत्ता वाली दवाई थी। यह रिपोर्ट यह भी बताती है कि सिर्फ नकली दवाई के कारण से हर साल मलेरिया से पीड़ित 1600 लोगों की मौत हो जाती है । गलत उपचार के कारण आगे की देखभाल के लिए रोगियों ओर स्वास्थ्य प्रदाताओं को 38.5 मिलियन डॉलर का

खर्च आता है [47]। इस प्रकार की नजाने कितनी कंपनियों को इससे कितना मुनाफा हो रहा है। स्थिति यह है कि दवाओं का निर्यात नही किया जा रहा जबकि उत्पादन लगातार बढ़ रहे है। इस प्रकार के दवाओं का निर्माण बहुत स्तर पर बहुत अलग-अलग होता है। fortune 500 कंपनियों की सूची में वर्तमान में 40 कंपनियां स्वास्थ देखभाल के क्षेत्र से जुड़ी हुई है [47, 48]।

लेकिन विकासशील देशों में भी स्वास्थ्य क्षेत्र में निजी क्षेत्र को लेकर नजरिया बदल रहा है ख़ासकर नीति निर्माताओं के लिए तभी तो RSBY जैसी मौजूदा बीमा योजनाओं के साथ नकारात्मक अनुभव की परवाह किए बिना, जब तक AB-PMJAY योजना की कल्पना और घोषणा की गई है । AB-PMJAY वही बदनाम PM बीमा मॉडल 'पर आधारित है जिसके प्रभावशीलता के खिलाफ बड़े पैमाने पर सबूत है । इससे बीमा कंपनियों को लाखो करोड़ का फायदा होगा [48]। अभी हाल में ही जम्मू और कश्मीर के सभी सरकारी कर्मचारियों को अनिल अंबानी के रिलायंस स्वास्थ्य को खरीदने को बाध्य किया गया और स्थिति तो और भी बदली कर्मचारी के वेतन से बीमा के नाम पर पैसे काट लिए गए। यह सब बस एक कंपनी को डूबने से बचाने के लिए किया गया। अब सरकार का इसमे लाभ यह है कि इस प्रकार की कई कंपनियां चुनाव के समय पार्टी को चंदा देती है और यह चंदा हजारो करोड़ का होता है [49]।

कई समय तो हम यह भी देखते है कि सरकारें इनकी हाथो की कठपुतली बन कर बैठी रहती है। इनमे से कई व्यवसायी राजनीति में पूर्ण रूप से सक्रिय है। या यूं कह दे कि कई राजनेता भी कई कंपनियों के मालिक है जो सरकार चलाने में मदद करते है।

आज ऐसे किसी भी बड़े अन्तर्राष्ट्रीय या राष्ट्रीय विवादों को ढूँढ़ पाना कठिन है जिनके पीछे कहीं न कहीं बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के स्वार्थ न जुड़ें हों। किसी आर्केस्ट्रा के संचालक की भाँति ये कम्पनियाँ यह निर्धारित करती है। कि देश के राष्ट्रपतियों, प्रधानमंत्रियों एवं नेताओं को किस प्रकार के स्वर निकालने चाहिए। ये कम्पनियाँ उनके प्रति विशेष रूप से निर्मम होती हैं जो उनकी बात नहीं मानते। ऐसे लोगों को सीधे-सीधे उनके पदों से हटा दिया जाता है या उनकी हत्या करवा दी जाती है [50]। इसने एक नए प्रकार की हथियारों का निर्माण और उसके लिए युद्ध की मांग को भी पैदा किया है। इसने मीडिया को खरीद लिया है या यूं कहें कि मीडिया हाउस ही इन्ही की हो गयी है। मतलब अब सवाल भी यही करते है और ज़बाब भी यही देते है और समाचार भी यही बनते है। इसलिए इन बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को 'सुपर स्टेट' भी कहा जाता है [51]। जिन देशों की ये कंपनियों होती हैं उन देशों की सरकारें भी इनसे भयभीत रहती है क्योंकि ये राज्य के ऊपर एक अधिराज्य के रूप में काम करती हैं। अब 'राज्य की नीति', 'राज्य की शक्ति', 'राज्य की सम्प्रभुता', आदि शब्द अर्थहीन हो गये है। इन कंपनियों की नीतियों से ही अब राज्य की नीतियां निर्धारित होती है। किन्तु विकसित देश इनको बर्दास्त करते हैं और इनका पोषण भी करते है क्योंकि ये कम्पनियां उनके लिए विकासशील व अविकसित देशों का दोहन करती हैं और नये साम्राज्यवाद को बनाये रखती है [52]।

(6) आभासी सामाजिक जुड़ाव और निजीवाद/व्यक्तिवाद

ववैश्वीकरण ने निजीवाद जो कि उदारवाद का प्रमुख चरित्र है उसको काफी हद तक बढ़ाया है। जिसने युवाओ और लोगो के मन मे भ्रांति पैदा कर दी है की वे बहुत अधिक जुड़े हुए है और वो संभव हुआ है फेसबुक, गूगल और सोशल मीडिया की साइट से [53]। यह एक आभासी जुड़ाव है । इन प्लेटफॉर्म का इस्तेमाल करने वाले अधिकांश लोग इसकी एक ऐसी सोच रखते है जहाँ वो आपस मे जुड़े भी होते है और एक-दूसरे से अलग भी। कम उम्र में ही मानसिक गड़बड़ी, अकेलापन, शारीरिक कार्य करने में कमी और इससे असंक्रमित बीमारियों का फैलना मुख्य कारण है [54]। बहुत से लोग आज अपना स्वार्थ साधने के कार्य भी इन्ही साइट्स से करते है । जैसे कैम्ब्रिज analytica द्वारा फेसबुक का इस्तेमाल पूरे चुनाव परिणाम को ही मोड़ देने में हुआ। तरह-तरह के सूचनाओ के वह इकट्ठा होने के कारण यह युवाओ के दिमाग को भ्रष्ट भी करता है अगर इसका विवेकपूर्ण इस्तेमाल न किया गया तो [55]।

हर कोई आज वैश्वीकरण को अपने शर्त पर लाना चाहता है और साम्यवादि तो इस पूरे परिदृश्य से ही बाहर नज़र आते है। यहाँ मेरा सीधा मतलब कई धार्मिक उन्माद फैलाने वाले संगठनो से है क्योंकि वो भी इन्ही प्लेटफॉर्म का प्रयोग अपने उन्मादी विचारो को फैलाने के लिए करते है जो कि विध्वंसक है [56]। एक तरफ सबको जोड़ कर रखने का वादा करने वाले इस वैश्विकरण ने इन सारी व्यवस्थाओ को जन्म दिया है तो दूसरी तरफ इसने व्यक्तिवाद को चरम पर पहुँचा दिया है जिससे सामाजिक गाँठजोड़ कमजोर हो गयी है। अर्थात समुदाय वाली जो विचार है वो खत्म होती नजर आती है [57]। जिसने एक 'Global War For Talent' की शुरुआत कर दिया है जो पूर्णतः वयक्तिगत लाभ, इच्छा, जरूरत और अधिकार पर आधारित है। इसलिए यह व्यवस्था आत्म-निर्भर, व्यक्तिगत प्रतिस्पर्धा और आत्म-मूल्यों पर अधिक जोर देती है। इस कारण यह वैश्वीकरण और व्यक्तिवाद या निजीवाद के संग्रह ने सामूहिक-मूल्यों, सामाजिक बंधन, लोकतंत्र, समत्ता, सामाजिक न्याय के मायने ही बदल दिए है [58]। यहाँ यह बताने के पीछे तर्क यह है कि हमे इन आभासी दुनिया से बाहर निकल वास्तविक समस्यों के निदान के लिए सोचना-विचारना चाहिए, इसका कतई यह मतलब नही की आपको इसका प्रयोग छोड़ देना चाहिए परंतु विवेकपूर्ण प्रयोग पर ध्यान देने को बढ़ावा देना है। और इसके पीछे कारोबारियों के राजनीति को भी समझना जरूरी है ।

आइए देखें कि भारत में वैश्वीकरण ने स्वास्थ्य की स्थिति को कैसे प्रभावित किया है

स्वास्थ्य पर सरकारी खर्च कम करने के साथ, नीतिगत उपायों ने स्वास्थ्य देखभाल में निजी क्षेत्र की वृद्धि को प्रोत्साहित किया है ताकि आज हमारे पास दुनिया में सबसे बड़ा और कम से कम विनियमित, निजी स्वास्थ्य क्षेत्र है। उपयोगकर्ता स्वास्थ्य शुल्क लगाने की नीति ने सार्वजनिक स्वास्थ्य सुविधाओं की पहुंच को नकारात्मक रूप से प्रभावित किया है, विशेष रूप से गरीब और हाशिए पर खड़े समुदायों के लिए और महिलाओं के लिए [59]।स्वास्थ्य देखभाल की लागत में तेज वृद्धि के साथ ही चिकित्सा व्यय ऋणग्रस्तताको बढ़ावा देती है, और यह राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति भी स्वीकार करती है/

बढ़ती भूख: इस प्रकार, प्रति व्यक्ति वार्षिक खाद्यान्न अवशोषण 1991 में 178 किलोग्राम से घटकर 154 किलोग्राम हो गया है। जबकि,2004 में भी भारत ने पश्चिम में पशु आहार के लिए खाद्यान्न का निर्यात किया था, और लगातार करते आ रहा है ।हमारी आधी ग्रामीण आबादी भोजन का सेवन के दृस्टिकोण से उप सहारा अफ्रीका के देशों से भी कम है [60]।

बाल मृत्यु दर में सुधार में कमी: अधिक गंभीर तथ्य यह है कि शिशु मृत्यु दर (IMR) में गिरावट की दर, जो कि 1970 और 80 के दशक में काफी ऊँची थी, 1990 के दशक में उल्लेखनीय रूप से धीमी हो गई है।[61] (Cite :Global Nutrition Report, 2018) कुपोषण की समस्या से दुनिया के अधिकांश देश जूझ रहे हैं। यूनिसेफ की मानें तो दुनिया में कुपोषण के शिकार कुल बच्चों की तादाद तकरीबन 14.6 करोड़ से भी अधिक है। इनमें से 5.7 करोड़ से ज्यादा तो अकेले भारत में ही हैं। यह तादाद दुनिया के कुल कुपोषित बच्चों की एक तिहाई से अधिक है। देश

में तकरीबन 19 करोड़ लोग कुपोषित हैं। यह आंकड़ा कुल आबादी का 14 फीसदी के करीब है। कुपोषण के मामले में सबसे ज्यादा खराब स्थिति महिलाओं की है। भारत में 18 साल तक के बच्चों की तादाद 43 करोड़ है। इसमें यदि महिलाओं की तादाद मिला दी जाये तो यह आंकड़ा कुल आबादी का 70 फीसदी के आस-पास पहुँच जाता है [61]। दुनिया में हर पाँचवाँ बच्चा भारतीय है। जहाँ तक भुखमरी का सवाल है, दुनिया में यह तेजी से बढ़ रही है। नोबेल पुरस्कार से सम्मानित अमर्त्य सेन का कहना है कि 'भारत में कुपोषित लोगों की तादाद बढ़ती जा रही है। यह उस समय और भयावह नजर आती है जबकि समूची दुनिया के सामने यह तथ्य उभर कर आता है कि भारत में दक्षिण अफ्रीका के मुकाबले दोगुने कुपोषित हैं। हमारा देश कहने को कुछ भी दावा करे और इस खुदख्याती में डूबा रहे कि हम अब शक्तिसम्पन्न हैं लेकिन असल में अपनी भारी-भरकम आबादी के साथ वह समूचे विश्व में कुपोषण में सबसे अव्वल है। यह स्थिति दिन-ब-दिन और खराब होती जा रही है' **[62]**। सच तो यह है कि हम भूख और कुपोषण पर काबू पाने में पूरी तरह नाकाम रहे हैं। इसके लिये राजनैतिक इच्छाशक्ति और उस पर वैश्वीकरण के प्रभाव जो उसे प्रशासनिक मजबूत कदम लेने से रोकता है मुख्य रूप से जिम्मेदार है।

बढ़ती असमानता : इस विषय पर चर्चा ऊपर के खंड में पहले ही कि जा चुकी है।

स्वास्थ्य देखभाल की बढ़ती लागत : अस्सी के दशक की तुलना में ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में आउट पेशेंट (Out-Patient) और इन-पेशेंट (In-Patient**)** देखभाल की लागत में तेजी से वृद्धि हुई।गौरतलब है कि हम स्वास्थ्य सेवाओं पर सकल घरेलू उत्पाद यानी जीडीपी को सबसे कम खर्च करने वाले देशों में शुमार हैं। आंकड़ों के मुताबिक भारत स्वास्थ्य सेवाओं में जीडीपी का महज 1.3 प्रतिशत खर्च करता है**,** जबकि ब्राजील स्वास्थ्य सेवा पर लगभग 8.3 प्रतिशत**,** रूस 7.1 प्रतिशत और दक्षिण अफ्रीका लगभग 8.8 प्रतिशत खर्च करता है। दक्षेस देशों में अफगानिस्तान 8.2 प्रतिशत**,** मालदीव 13.7 प्रतिशत और नेपाल 5.8 प्रतिशत खर्च करता है। भारत स्वास्थ्य सेवाओं पर अपने पड़ोसी देशों चीन**, .**बांग्लादेश और पाकिस्तान से भी कम खर्च करता है। इसका खुलासा शोध एजेंसी 'लैंसेट' ने अपने 'ग्लोबल बर्डेन ऑफ डिजीज' नामक अध्ययन में किया है **[63]**। अभी कुछ महीनों पहले घटित गुरुग्राम के फोर्टिस अस्पताल का ताजा उदाहरण हमारे सामने है**,** जहां डेंगू पीड़ित 7 साल की बच्ची के करीब 15 दिनों तक चले इलाज का बिल 16 लाख बताया गया। इसके बाद भी बच्ची की जान नहीं बच सकी [64]।

क्या एनजीओ (NGO) भारत की स्वास्थ्य देखभाल वाली संपूर्ण आवश्यकताओं का सही जवाब हैं?

नजीओकरण

मै निश्चित रूप से इस बात से इनकार नहीं करता कि कुछ एनजीओ स्वास्थ्य और परिवार नियोजन में उत्कृष्ट काम कर रहे हैं**,** कुछ ने मॉडल के रूप में काम किया है**,** वास्तव में एनजीओ की एक सीमा प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के मुद्दों पर शामिल है**,** जिसमें ना तो राज्य कोई सहायता प्रदान करता है और ना ही विदेशी दान दाता। यह महसूस करना बेहद जरूरी है कि विचारधारा**,** गतिविधियों**,** फंडिंग**,** आउटरीच और प्रभावशीलता के संदर्भ में गैर-सरकारी संगठन एक व्यापक और मिश्रित श्रेणी के हैं और उनके बारे में कोई भी सामान्यीकरण बेहद कमजोर होगा, यदि मूर्खta नहीं तो। इसका उपयोग कई कारणों से राज्य के विकल्प के रूप में नहीं किया जा सकता है।

1. पहला**,** गैर-सरकारी संगठन गतिविधियाँ स्वैच्छिक हैं और अनिवार्य नहीं हैं। इस प्रकार वे सामाजिक रूप से एक विशिस्ट समुदाय को बहार रखने वाले भी हो सकते है और वास्तव में यह डर कि गैर-सरकारी संगठन दलितों और महिलाओ के हितों के खिलाफ हो सकते हैं, अक्सर दलित कार्यकर्ताओं, नारीवादी और विद्वानों द्वारा आवाज उठाई गई है। [65]
2. दूसरा, वे आवश्यक रूप से जवाबदेह नहीं हैं, निश्चित रूप से उन लोगों के लिए नहीं जिसके साथ वो काम करते हैं [66]।
3. तीसरा, निजी और गैर सरकारी संगठनों की निगरानी और नियमन का पूरा मुद्दा एक जरूरी प्रश्न है, लेकिन हमें केवल यह याद रखना है कि देश में नसबंदी का घोटाला बड़े पैमाने पर गैर सरकारी संगठनों द्वारा किया गया था [67]।
4. वास्तव में एनजीओ किसी भी तरह से राजनीतिक निकायों की तुलना में अधिक "प्रतिनिधि" हैं, यह एक मिथ्या है जो नव-उदारवाद के युग में बनाया गया है। इसके कारण निति निर्माण में "सिविल सोसाइटी ऑर्गेनाइजेशन" के लिए पूरा "स्थान " तो मिल गया जिसमे नजीओ भी शामिल है, लेकिन ट्रेड यूनियनों जैसे अन्य सिविल सोसाइटी को निति निर्माण में शामिल ना करना या बाहर रखना एक नयी प्रकार की समस्या है [68]।
5. अंत में, यह भी सच है कि एनजीओ आंतरिक रूप से अधिक लोकतांत्रिक नहीं हैं**[69]**।

References

1. Guillén MF. Is globalization civilizing, destructive or feeble? A critique of five key debates in the social science literature. Annual review of sociology. 2001; 27(1):235-260.
2. Larner W. Neoliberalism?. 2003.
3. Nagaraj R. What has happened since 1991? Assessment of India's economic reforms, Economic and political Weekly. 1997, 2869-2879.
4. Escobar A. Encountering development: The making and unmaking of the Third World. Princeton University Press. 2011.
5. Heynen N, McCarthy J, Prudham S, Robbins P. (Eds.). Neoliberal environments: false promises and unnatural consequences. Routledge, 2007.
6. Piketty T. About capital in the twenty-first century. American Economic Review, 2015; 105(5):48-53.
7. Stulz RM. Globalization of equity markets and the cost of capital (No. w7021). National Bureau of Economic Research, 1999
8. Nygaard A, Dahlstrom R. Multinational company strategy and host country policy. Scandinavian Journal of Management, 1992; 8(1):3-13.
9. Reinhardt UE. Can efficiency in health care be left to the market?. Ournal of Health Politics, Policy and Law. 2001; 26(5):967-992.
10. https://www.oxfamindia.org/sites/default/files/WideningGaps_IndiaInequalityReport2018.pdf
11. Ashton J, Seymour H. The new public health Milton Keynes: Open University Press, 1988, 1.
12. Yach D, Bettcher D. The globalization of public health, I: Threats and opportunities. American journal of public health. 1998; 88(5):735-744.
13. Britton SG. The political economy of tourism in the Third World. Annals of tourism research. 1982; 9(3):331-358.

14. Sandel MJ, Anne T. Liberalism and the Limits of Justice. Cambridge University Press, 1998.
15. Loescher G. Beyond charity: International cooperation and the global refugee crisis: A twentieth century fund book. Oxford University Press, 1996.
16. Whyte D, Wiegratz J. (Eds.). Neoliberalism and the moral economy of fraud. Routledge, 2016.
17. Maskus KE, Reichman JH. The globalization of private knowledge goods and the privatization of global public goods. Journal of International Economic Law. 2004; 7(2):279-320.
18. Sandberg L, Steckel RH. Was industrialization hazardous to your health? Not in Sweden!. In Health and welfare during industrialization University of Chicago Press. 1997, 127-160).
19. Waters WF. Globalization, socioeconomic restructuring, and community health. Journal of Community Health. 2001; 26(2):79-92.
20. Leichenko R, O'Brien K. Environmental change and globalization: double exposures. Oxford University Press, 2008.
21. https://hindi.indiawaterportal.org/paryaavaran_par_prabhaav
22. https://www.ifsw.org/hi/globalisation-and-the-environment/
23. Landrigan PJ, Fuller R, Acosta NJ, Adeyi O, Arnold R, Baldé AB et al. The Lancet Commission on pollution and health. The Lancet. 2018; 391(10119):462-512.
24. Castranova V, Vallyathan V. Silicosis and coal workers' pneumoconiosis. Environmental health perspectives. 2000; 108(4):675-684.
25. Donoghue AM. Occupational health hazards in mining: an overview. Occupational medicine. 2004; 54(5):283-289.
26. https://www.ifsw.org/hi/globalisation-and-the-environment/
27. http://www.indiaenvironmentportal.org.in/files/file/State%20of%20the%20Global%20Climate%20in%202018.pdf
28. https://globalnutritionreport.org/reports/global-nutrition-report-2018/
29. Gray JM, Gray HP. The multinational bank: a financial MNC?. Journal of Banking & Finance. 1981; 5(1):33-63.
30. https://www.indiabudget.gov.in/ub2019-20/bs/bs.pdf
31. Akin JS, Birdsall N, De Ferranti DM. Financing health services in developing countries: an agenda for reform World Bank Publications. 1987, 34.
32. Jamison DT. Investing in health. Disease control priorities in developing countries. 2006; 2:3-34.
33. Spiegel JM, Labonte R, Ostry AS. Understanding “globalization” as a determinant of health determinants: a critical perspective. international Journal of Occupational and Environmental Health, 2004; 10(4):360-367.
34. Labonté R, Schrecker T. Globalization and social determinants of health: Introduction and methodological background (part 1 of 3). Globalization and Health. 2007; 3(1):5.
35. Labonte R, Sanger M. Glossary of the World Trade Organisation and public health: part 1. Journal of Epidemiology & Community Health. 2006; 60(8):655-661.
36. Labonte R, Sanger M. Glossary on the World Trade Organisation and public health: part 2. Journal of Epidemiology & Community Health. 2006; 60(9):738-744.
37. Sainath P. Farm suicides: a 12-year saga. The Hindu. 2010, 25.
38. Labonte R, Sanger M. Glossary on the World Trade Organisation and public health: part 2. Journal of Epidemiology & Community Health. 2006; 60(9):738-744.
39. https://www.cfr.org/article/chinas-belt-and-road-gets-win-italy
https://www.theguardian.com/world/2019/mar/28/russian-troops-landed-caracas-talks-venezuela-envoy-military
40. Baradat LP, Phillips JA. Political ideologies: Their origins and impact. Routledge, 2016.
41. Navarro V, Shi L. The political context of social inequalities and health. International Journal of Health Services. 2001; 31(1):1-21.
42. Walton CD. Geopolitics and the great powers in the 21st century: multipolarity and the revolution in strategic perspective. Routledge, 2007.
43. Bhola P. Gulf Crisis and Its Fallouts on South Asia. Indian Journal of Asian Affairs. 1990; 3(1, 2):32-49.
44. Norris P. Democratic deficit: Critical citizens revisited. Cambridge University Press, 2011.
45. http://hindibhojpuri.blogspot.com/2011/04/1.html?m=1
46. Painter DS. The Marshall Plan and oil.Cold War History, 2009; 9(2):159-175.
47. https://www.who.int/medicines/regulation/ssffc/publications/gsms-report-sf/en/
48. Sciegaj M, Garnick DW, Horgan CM, Merrick EL, Goldin D, Urato M et al. Employee assistance programs among Fortune 500 firms. Employee Assistance Quarterly. 2001; 16(3):25-35.
49. https://economictimes.indiatimes.com/news/politics-and-nation/jammu-kashmir-governor-satyapal-singh-scraps-health-cover-deal-with-reliance-insurance/articleshow/66371778.cms
50. http://hindibhojpuri.blogspot.com/2011/04/1.html?m=1
51. Biersteker TJ. Multinationals, the state and control of the Nigerian economy Princeton University Press, 2014, 498.
52. Game A. Multinationals and the Nation-State. Australian Left Review, 1975; 1(48):17-23.
53. Croucher S. Globalization and belonging: The politics of identity in a changing world. Rowman & Littlefield, 2018.
54. Grégoire Y, Salle A, Tripp TM. Managing social media crises with your customers: The good, the bad, and the ugly. Business Horizons. 2015; 58(2):173-182.
55. Youmans WL, York JC. Social media and the activist toolkit: User agreements, corporate interests, and the information infrastructure of modern social movements.Journal of Communication, 2012; 62(2):315-329.
56. Iyer S. The new economics of religion. Journal of Economic Literature. 2016; 54(2):395-441.
57. Brown P, Tannock S. ‘Education, meritocracy and the global war for talent’, Journal of Education Policy. 2009; 24(4):377-392
58. Green A. ‘Education, globalization, and the nation state’, in Lauder H, Brown P, Dillabough J, and Halsey A H (eds)Education, globalization and social change, Oxford: Oxford University Press, 2006.
59. Yates R. Universal health care and the removal of user fees. The Lancet. 2009; 373(9680), 2078-2081.

60. Banik D. Growth and hunger in India. Journal of Democracy, 2011; 22(3):90-104.
61. Galiani S, Gertler P, Schargrodsky E. Water for life: The impact of the privatization of water services on child mortality. Journal of political economy. 2005; 113(1):83-120. And Global Nutrition Report, 2018
62. Dreze J, Sen A. Hunger and public action. Oxford University Press on Demand, 1989.
63. Lopez AD, Murray CC. The global burden of disease, 1990–2020.Nature medicine, 1998; 4(11):1241. (https://www.thelancet.com/journals/lancet/article/PIIS0140-6736(05)61849-1/fulltext)
64. https://timesofindia.indiatimes.com/city/delhi/dengue-patient-dies-parents-billed-16-lakh-for-2-weeks-in-icu/articleshow/61732259.cms
65. Fowle A. Demonstrating NGO performance: Problems and possibilities. Development in practice. 1996; 6(1):58-65.
66. Unerman J, O'Dwyer B. Theorising accountability for NGO advocacy. Accounting, Auditing & Accountability Journal. 2006; 19(3):349-376.
67. Efuk S. 'Humanitarianism that harms': A critique of NGO charity in Southern Sudan. Civil Wars. 2000; 3(3):45-73.
68. Rahman S. Development, democracy and the NGO sector: theory and evidence from Bangladesh.Journal of developing societies. 2006; 22(4):451-473.
69. Lehr-Lehnardt R. NGO legitimacy: reassessing democracy, accountability and transparency. In Cornell Law School Inter-University Graduate Student Conference Papers. 2005, 6.
70. Cutler DM. Health care and the public sector. Handbook of public economics. 2002; 4:2143-2243.
71. Chou SY, Liu JT, Hammitt JK. National health insurance and precautionary saving: evidence from Taiwan. Journal of Public Economics. 2003; 87(9, 10):1873-1894.
72. Zwi AB, Brugha R, Smith E. Private health care in developing countries: If it is to work, it must start from what users need, 2001.
73. http://www.indialegallive.com/top-news-of-the-day/news/hospital-co-got-free-land-and-threw-out-free-treatment-clause-sc-takes-up-case-38785
74. https://www.thehindu.com/news/national/More-Delhi-hospitals-likely-to-be-fined/article14420429.ece
    Clark AM. Non-governmental organizations and their influence on international society. Journal of international affairs, 1995, 507-525.
75. McGregor S. Neoliberalism and health care. International Journal of Consumer Studies. 2001; 25(2):82-89.